शोध-चिंतन पत्रिका: सहयोगी विद्वानों द्वारा पुनरीक्षित ई शोध पत्रिका
अंक:3; जुलाई-दिसंबर, 2021; पृष्ठ संख्या:23-35

# 'आधा गाँव' उपन्यास में चित्रित सांप्रदायिकता की समस्या

✍ डॉ॰ शरिफुज जामान

**शोध-सार :**

भारत विभाजन पर आधारित 'आधा गाँव' राही मासूम रज़ा का बहुचर्चित उपन्यास है। इसमें भारत विभाजन के समय की मानवीय पीड़ा को गंगौली के निवासियों के माध्यम से उजागर किया है। भारत की मिट्टी में सदियों से हिन्दुओं और मुसलमानों का जीवन पलता आ रहा था। पाकिस्तान बनने की मांग से पूर्व देश के हर एक गाँव में हिन्दू-मुसलमान दोनों संप्रदाय के लोग बड़े सौहार्दपूर्वक रहते थे। जैसे-जैसे देश की आजादी नजदीक पहुँचती गयी सांप्रदायिक वातावरण तीव्र होता गया। सांप्रदायिकता की भयानक आग ने देश के शहरों के साथ-साथ गाँवों को भी निगल लिया था। विवेच्य उपन्यास के रचनाकार का मानना है कि आजादी के ऐन वक्त और आजादी के बाद देश के सांप्रदायिक वातावरण को हिन्दू और मुसलमानों के कुछ महत्वकांक्षी नेताओ ने हवा दे रखी थी। दूसरी ओर, अंग्रेजों की 'फूट डालो, राज करो' नीति ने इस आग को भड़काने में सहयोग दिया था जो आम जनता की समझ से बाहर था। सन् 1947 में देश को आजादी तो मिली पर, बँटवारे की मार के साथ। हिन्दू बहुसंख्यक इलाके को लेकर हिंदुस्तान और मुस्लिम बहुसंख्यक इलाके को लेकर पाकिस्तान बना दिया गया। लोगों की आम धारणा थी कि विभाजन के बाद सांप्रदायिकता की जड़ें खत्म हो जाएंगी, लेकिन आजादी के सत्तर साल बाद भी यह खत्म होता हुआ नजर नहीं आता। प्रस्तुत शोधालेख में मूलतः व्याख्यात्मक एवं विश्लेषणात्मक पद्धतियों के माध्यम से इसी ज्वलंत पहलू पर प्रकाश डाला गया है।

**बीज शब्द :** *सांप्रदायिकता, भारत, पाकिस्तान, धर्म, राजनीति।*

**प्रस्तावना :**

उपन्यास आधुनिक साहित्य की एक लोकप्रिय गद्य-विधा है। इस विधा का हिंदी में प्रादुर्भाव अंग्रेजी साहित्य के प्रभाव-स्वरूप हुआ। इसका मतलब यह नहीं है कि भारत में उपन्यास जैसी विधा पहले से नहीं थी।

संस्कृत, पालि, प्राकृत, अपभ्रंश आदि भाषाओं में बहुत सारी नीति-कथाएँ एवं आख्यान मिलते हैं जो आधुनिककालीन उपन्यास साहित्य से मिलते-जुलते हैं। लेकिन उन नीति-कथाओं एवं आख्यानों को उपन्यास की परिभाषाओं में नहीं समेट सकते। वास्तविकता तो यह है कि इस गद्य-विधा का उद्भव यूरोप में हुआ था। परवर्ती समय में बांग्ला के माध्यम से यह विधा हिन्दी में आयी।

'उपन्यास' शब्द अपने मूल रूप में प्राचीन है। प्राचीन साहित्य में 'उपन्यास' शब्द का प्रयोग एकाधिक बार हुआ है। प्राचीन 'उपन्यास' शब्द का प्रयोग नाटक के प्रसन्न करनेवाले तत्व के लिए किया गया था। आज जिस रूप में 'उपन्यास' शब्द का प्रयोग आधुनिक साहित्य के लिए किया जाता है उस रूप में प्राचीन संस्कृत साहित्य में नहीं किया गया था। उपन्यास आधुनिक साहित्य की एक नितांत नवीनतम गद्य-विधा है। प्राचीन 'उपन्यास' शब्द और आधुनिक 'उपन्यास' शब्द में नाममात्र का साम्य है। आधुनिक 'उपन्यास' शब्द 'उप' उपसर्ग और 'न्यास' पद के संयोग से बना है। 'उप' का अर्थ है समीप और 'न्यास' का अर्थ है रचना, अर्थात् 'उपन्यास' -- जिसको पढ़कर पाठक को ऐसा लगे कि यह उसी की कथा है, उसी के जीवन की कथा को उसी की भाषा में कहा गया है।

इस विधा का क्षेत्र विशाल है तथा मानव-जीवन के सम्पूर्ण चित्रण के लिए यह उपयुक्त है। इसमें लेखक, पाठक और समीक्षक तीनों को समान रूप से आकर्षित करने की क्षमता है। उपन्यासकार अपने उपन्यास में कथानक को क्रमबद्ध रूप में प्रस्तुत करता है ताकि पाठक सहज ही उसके सन्देश को ग्रहण कर उससे प्रभावित हो सके। पाश्चात्य उपन्यासकार हेनरी फिल्डिङ (1707-1754) ने उपन्यास के विषय में कहा था–

> Novel is a comic epic in pros. It is the loosest form of the literary art, but its very freedom from all limitations allows it to give a fuller representation of real life and character than anything else can provide. (Prasad 2009:193)

**विश्लेषण :**

'आधा गाँव' उपन्यास के रचयिता तथा यथार्थ के धरातल पर विश्वास रखनेवाले

कलाकार डॉ॰ राही मासूम रज़ा हिंदी साहित्य के एक बहुमुखी प्रतिभाशाली साहित्यकार के रूप में अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं। उनको बचपन से ही अनुकूल साहित्यिक वातावरण मिला था। उनका सम्पूर्ण परिवार साहित्य एवं कला में रुचि रखता था। आरंभिक जीवन से ही साहित्यिक क्षेत्र में वे सक्रिय रहे। जब वे चौथी-पाँचवीं कक्षा में थे, तभी से उनको कहानी तथा काव्य-सृजन की प्रेरणा मिली थी। उनकी पहली कहानी 'तन्नु भाई' (1944) लाहौर से प्रकाशित पत्रिका 'नफसियत' में छपी थी। सन् 1950 में उनका पहला उपन्यास 'मुहब्बत के सिवा' उर्दू में प्रकाशित हुआ। सन् 1966 में उनका बहुचर्चित उपन्यास 'आधा गाँव' प्रकाशित हुआ, जिससे राही मासूम रज़ा का नाम उच्चकोटि के उपन्यासकारों में गिना जाने लगा। अपने जीवनकाल में उन्होंने हर एक साहित्यिक विधा में अपनी कलम चलाई।

**'आधा गाँव' का कथासार**

देश-विभाजनकालीन मुस्लिम जीवन की त्रासदी पर आधारित सन् 1966 में प्रकाशित 'आधा गाँव' राही मासूम रज़ा का बहुचर्चित उपन्यास है। उत्तर प्रदेश के गंगौली गाँव की भौगलिक सीमा के इर्द-गिर्द बुने गये इस उपन्यास में विभाजनकालीन भारत की सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक परिस्थितियाँ उभरकर आयी हैं। शिया मुसलमानों पर केंद्रित यह उपन्यास स्वाधीनता आंदोलन तथा भारत-विभाजन का ऐतिहासिक साक्ष्य है। देश के बँटवारे के समय मुसलमान दुविधा में पड़ जाते हैं कि वे भारत को अपनाएँ या पाकिस्तान चले जाएँ। इस दुविधा की स्थिति में 'आधा गाँव' के लोग भी जूझते रहे। अपने जन्म-स्थान गंगौली के प्रति बेहद मोहब्बत रखनेवाले उपन्यासकार राही मासूम रज़ा ने भोगे हुए सत्य को एकत्र करके इस उपन्यास को प्रस्तुत किया है।

विभिन्न जाति-उपजाति, भाषा-भाषी, धर्म, संप्रदाय के लोग सदियों से हमारे देश में एक साथ रह रहे हैं। 'आधा गाँव' में लेखक ने बताया है कि उत्तर प्रदेश की गंगौली भी एक ऐसी जगह थी जहाँ मुसलमान और हिंदू में खास भेदभाव न था। वे एक दूसरे के समारोहों और सामाजिक कार्यक्रमों में शामिल हुआ करते थे। आजादी की लड़ाई में भी दोनों ने बराबर की भागीदारी निभायी थी। परंतु, जब अंग्रेजों ने इस देश की राजनीतिक शक्ति प्राप्त की तो उनलोगों ने 'फूट डालो और राज करो' नीति अपनायी। इस नीति के तहत उन लोगों ने

भारत के नागरिकों को संप्रदाय के अनुसार अलग-अलग समूहों में बाँट कर रख दिया। परिणामस्वरूप भारत के विभिन्न धर्मावलंबी लोगों के बीच बैर भाव पैदा हुआ। भारत के गाँवों को प्रतिनिधित्व करनेवाले गंगौली में भी धर्मिक वातावरण बिगड़ने लगा।

सन् 1947 के परिप्रेक्ष्य में लिखे गये मुस्लिम जीवन की त्रासदी पर आधारित प्रस्तुत उपन्यास में मुख्य रूप से तीन बातें सामने आयी हैं- भारत-विभाजन, तत्कालीन मुस्लिम समाज और विभाजन के समय का अंतर्द्वंद्व। प्रस्तुत उपन्यास की कथा उस मन:स्थिति से गुजरने की व्यथा के रूप में वर्णित है,जो उस समय के मुसलमानों के मन में उपजी थी। जब-जब बँटवारे की बात आती है, तो पात्रों में अंतर्द्वंद्व स्पष्ट होता है। मुसलमानों के लिए अलग मुल्क की बात आती है तो अपनी जमीन का मोह जाग उठता है। पाकिस्तान बना तो गंगौली किस तरफ रहेगा ? दो राष्ट्रों के बीच गंगौली के निवासी पीसे जाते हैं। फुन्नन मियां जैसे मुस्लिम पात्र इस्लाम धर्म की बुनियाद पर बने पाकिस्तान का नाम लेना ही नहीं चाहते, क्योंकि उनकी जड़ें गंगौली की जमीन में धंसी हैं।

उपन्यासकार राही मासूम रज़ा ने विभाजन का दर्द झेला था। उन्हें इस बात का एहसास था कि सांप्रदायिक सौहार्द के बिना देश का समुचित विकास संभव नहीं है। प्रस्तुत उपन्यास के जरिए उन्होंने आजादी के पूर्व की मानसिक स्थिति, आजादी के बाद लोगों में आयी तनहाइयों को जीवंत रूप में प्रस्तुत किया है। यथार्थ की पृष्ठभूमि और वास्तविक घटनाओं में रसे-बसे पात्रों ने हर तरह से उपन्यास को मजबूती प्रदान की है।

भारतीय जीवन में धर्म का प्रमुख स्थान है। धर्म शब्द का प्रयोग प्राचीन काल से होता आ रहा है। धर्म एक ऐसा साधन है, जो मनुष्य को आध्यात्मिक पोषण देता है, अंधकार से दिव्यता की ओर ले जाता है, नैतिक चेतना के पथ पर अग्रसर कराता है। धर्म शब्द का प्रथम प्रयोग ऋग्वेद में मिलता है। इस संबंध में आलोचना करते हुए समीक्षक बाबूराम कहते हैं-

> 'धर्म' शब्द सर्वप्रथम 'ऋग्वेद' में प्रयुक्त हुआ है। 'धर्म' शब्द 'धृ' धातु से 'मन्' प्रत्यय लगाकर बनता है। 'धृ' धातु का अर्थ है-धारण करना। इस प्रकार जो भी धारणीय है, उसे धर्म कहते हैं। (बाबूराम 2002:115)

संस्कृत व्याकरण के हवाले से 'राही मासूम रज़ा के उपन्यासों में समकालीन संदर्भ' में धर्म शब्द की व्युत्पत्ति इस प्रकार दी गयी है-

> धृ धातु से धर्म शब्द की उत्पत्ति मानी जाती है, जिसका तात्पर्य है धारण करना, आलम्बन देना या पालन करना आदि। अत: जो तत्व सारे संसार के जीवन को धारण करता हो, जिसके बिना लोक संस्कृति संभव न हो, जिसके सब कुछ संयमित, सुव्यवस्थित एवं सुसंचालित रहे उसे धर्म कह सकते हैं।
> (जायसवाल 2009:202)

'मनुस्मृति' में धर्म का लक्षण इस प्रकार दिया गया है--

> अहिंसा सत्यमस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रह:।
> एतं सामासिक धर्म चातुर्वण्येववीन्मनु।।
> (बाबूराम 2002:116)

अर्थात्, अहिंसा, सत्य, अस्तेय अर्थात चोरी न करना, शौच अर्थात शुद्ध या पवित्रता और इंद्रिय दमन–ये चारों वर्णों के सामान्य धर्म हैं।

प्राचीन भारतीय मनीषियों ने धर्म पर वैज्ञानिक ढंग से विचार करने का प्रयत्न किया था। इसके विपरीत विश्व के अन्य देशों में धर्म के संबंध में इतना व्यापक चिंतन देखने को नहीं मिलता। वैशेषिक दर्शन के प्रणेता कणाद की धर्म-संबंधी व्याख्या के बारे में शिवदत्त ज्ञानी लिखते हैं-

यतोऽभ्युदय नि:श्रेयससिद्धि:स धर्म:-अर्थात् जिससे अभ्युदय व नि:श्रेयस की सिद्धि हो वह धर्म है।

(ज्ञानी 1944:201)

अभ्युदय से लौकिक और नि:श्रेयस से पारलौकिक उन्नति एवं कल्याण का बोध होता है। जीवन के ऐहिक एवं परलौकिक दोनों पहलुओं से धर्म को संबोधित किया गया था।

'हिंदी विश्वकोश' में धर्म की व्याख्या इस प्रकार मिलती है--

> वह आचरण या वृति, जिससे जाति वा समाज की रक्षा और सुख-शांति की वृद्धि हो तथा परलोक में अच्छी गति मिले।
> (वर्मा,वसु 1986:200)

'आदर्श हिंदी शब्दकोश' के अनुसार धर्म का अर्थ है-

> सुकृत, सत्कर्म, पुण्य, सदाचार वह आचरण, जिससे समाज की रक्षा और कल्याण हो, सुख शांति की वृद्धि और परलोक में सद्गति प्राप्त हो...।
> (पाठक 2015:382)

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि 'धर्म' और 'नीति' दोनों एक सिक्के के दो पहलू

हैं। नीति का सैद्धांतिक रूप धर्म है और धर्म का व्यावहारिक रूप नीति है। धर्म में जब नैतिकता का अभाव होता है, तब सांप्रदायिकता का जन्म होता है। यह एक संकीण विचारधारा है, जो लोगों को धर्म के नाम पर बाँटती है। सांप्रदायिकता उस राजनीति को कहा जाता है जो धार्मिक समुदायों के बीच विरोध या झगड़े पैदा करती है। आपसी मतभेद नेता को सम्मान देने के बजाय विरोधाभास उत्पन्न करता है। इससे व्यक्ति किसी अन्य धर्म के विरोध में अपना व्यक्तित्व प्रस्तुत करे, तो उसे सांप्रदायिकता कहते हैं। 'आधा गाँव' के उपन्यासकार राही मासूम रज़ा सांप्रदायिकता को राजनीतिक गर्भ से पैदा हुआ साँप मानते हैं।

**'आधा गाँव' उपन्यास में चित्रित सांप्रदायिकता :**

देश की आजादी का आंदोलन जितना तीव्रतर होता गया सांप्रदायिक वैमनस्य भारतीय राजनीति में मजबूत होता गया। उन दिनों सत्ताधारियों एवं राजनीतिज्ञों को देश और समाज से ज्यादा अपनी कुर्सी प्यारी थी। इसलिए वे लोगों को धर्म के आधार पर बाँटकर राजनीति की रोटी सेंक रहे थे। इस राजनीतिक योजना के तहत धार्मिक स्थलों पर ही राजनीतिक बैठकें आयोजित की गयी थीं। धर्म के प्रमुखों को राजनीति में शामिल करके सांप्रदायिक राजनीति का जहर फैलाया गया था। मंदिर, मस्जिद, गुरुद्वारे आदि राजनीतिक प्रेक्षागृह में बदल गये थे तथा बाबा, महात्मा, पुजारी, मुल्ला आदि राजनीतिक ठेकेदार बन गये थे। वे लोगों को नैतिकता का पाठ देने के बजाय अपने संप्रदाय को दूसरे के खिलाफ भड़काते थे। विभाजनकालीन ऐसी परिस्थितियों को उजागर करने के लिए उपन्यासकार राही मासूम रज़ा ने विभिन्न धर्म, जाति, संप्रदाय से परिपूर्ण गंगौली नामक गाँव को चुना। यह गाँव सांप्रदायिक सौहार्द का प्रतीक है। सांप्रदायिक संप्रीति का इससे बढ़कर क्या उदाहरण क्या हो सकता है कि -- मुहर्रम के दिन ताजिये के आगे चलनेवालों की कतार हिंदुओं की हो, कब्रग्राहों पर चादर चढ़ाने वाली मनोवृत्तियाँ हिंदुओं में हों तथा मियां लोग दशहरे के लिए चंदा दें, मंदिर बनाने के लिए मुस्लिम जमींदार जमीन देकर प्रोत्साहित करते हों। यह गाँव तत्कालीन भारतवर्ष के गाँवों का प्रतिनिधित्व करता है।

सांप्रदायिक एकता के प्रतीक इस गाँव की हवा में भी राजनीति किस प्रकार

सांप्रदायिक जहर घोलने का काम करती है इसका सूक्ष्म विश्लेषण प्रस्तुत करता है यह उपन्यास। इसके लिए 'आधा गाँव' के उपन्यासकार ने हिंदू और मुसलमान दोनों समूहों में अनेक सांप्रदायिक पात्रों का निर्माण किया है। हिंदू पात्रों में मास्टर साहब, मातादीन, स्वामीजी और मुसलमान पात्रों में अब्बास, अनवारूल हसन, अलीगढ़ से आये काली शेरवानी पहने दो युवक आदि प्रमुख हैं।

उपन्यासकार राही ने उल्लेख किया है कि सन् 1857 की जनक्रांति के समय गंगौली में हिंदू-मुस्लिमों में एकता थी। दोनों संप्रदायों ने एकजूट होकर उस विद्रोह में हिस्सा लिया था, जिसे देखकर अंग्रेज डर गये थे। भारत में बने रहने के लिए भारतीयों बाँटना उनलोगों के लिए जरूरी था। वे कभी हिंदुओं का पक्ष लेकर तो कभी मुसलमानों का पक्ष लेकर दोनों संप्रदायों को एक-दूसरे के खिलाफ लड़वाते थे। परिणामस्वरूप धर्म की बुनियाद पर कुछ राजनीतिक पार्टियों का जन्म हुआ। देश के दो प्रमुख धार्मिक समुदाय हिंदू और मुसलमान दोनों नाना प्रकार के पूर्वाग्रहों से ग्रसित थे, जिसका गलत फायदा इन राजनीतिक पार्टियों ने उठाया था। उन दिनों उत्तर प्रदेश का अलीगढ़ मुस्लिम लीग का मुख्य प्रचार-केंद्र हुआ करता था। गाँव से पढ़ाई के लिए अलीगढ़ गये मुस्लिम लड़के गाँव आकर जिन्ना (मुस्लिम लीग के अध्यक्ष) की राजनीति समझाकर ग्रामीण मुसलमानों को भड़काते हैं। वे भोले-भाले ग्रामीणों के बीच में मनगढ़त बातें फैलाते हैं। इसके परिणामस्वरूप हिंदू-मुस्लिम एकता खण्डित होकर देश के गाँवों का महौल विषैला बन जाता है। यह सांप्रदायिकता अलीगढ़ शहर से होती हुई धीरे-धीरे अन्य गाँवों की तरह गंगौली को भी निगल लेता है, जिसे देखकर उपन्यासकार कहते हैं–

> गंगौली में गंगौलीवालों की संख्या कम होती जा रही है और सुन्नियों, शीओं और हिंदुओं की संख्या बढ़ती जा रही है।
>
> (रज़ा 2015:13)

लीग के सदस्य अब्बास गंगौली के मुसलमानों को भावात्मक तरीके से आह्वान कर उनमें नफरत भरता है। लीग का अन्य एक कार्यकर्ता अनवारुल हसन राकी और अलीगढ़ से आये काली शेरवानी पहने दो युवक जिन्ना को मुस्लिम नेता कहकर पाकिस्तान के समर्थन में वोट डालने के लिए कहते हैं। तब तक राजनीति से अनजान ग्रामीण मुसलमानों को पाकिस्तान के बारे में कुछ जानकारी थी ही

नहीं। मुस्लिमों के लिए अलग मुल्क पाकिस्तान बनने की बात जब अब्बास लोगों से कहता है तब उन्हें लगने लगता है कि अब्बास जो कुछ कह रहा है वह सही होगा; क्योंकि वह पढ़ा-लिखा है और अपने ही गाँव का है इसलिए विश्वास का लायक है। पढ़े-लिखे एक नौजवान द्वारा कहे जाने के कारण अनपढ़ ग्रामीण आसानी से बात मान लेते हैं। ग्रामीण स्त्री गफूरन कहती है-

> अब मियाँ, आप पढ़े- लिखे हैं, ठीक ही कहते होंगे। (रज़ा 2015:58)

इनके बहकावे में आकर अनपढ़ गफूरन और सितारा जैसी ग्रामीण स्त्रियाँ चुपचाप उसकी बातों को स्वीकारने लगती हैं। अनवारुल हसन राकी ग्रामीण मुस्लिमों को कभी पाकिस्तान का सपना दिखाता है, कभी सरहद पर ही जायदाद के बँटवारे करने का प्रलोभन देता है, कभी जमींदारी कानून के नाम से डराता है, कभी काँग्रेस पर आरोप लगाकर स्वतंत्र देश की माँग करने के लिए मुसलमानों को प्रेरित करता है–

> काँग्रेस हिंदुओं की पार्टी है। चूँकि मुसलमान जमींदार ज्यादा हैं, इसलिए यह जमींदारी जरूर खत्म करेगी। त देहातन में मुसलमान कै घर हैं ? दाल में नमक की तरह त हैं।
>
> (रज़ा 2015:51)

सांप्रदायिकता के निर्माण में आर्थिक कारणों ने भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। गंगौली के ज्यादातर निवासी जमींदारी से ताल्लुक रखते थे। उन्हें यह डर सताने लगता है कि हिंदू बहुसंख्यकवाले भारत में काँग्रेस की सरकार बनेगी तो उनकी जमींदारी चली जायेगी। उन्हें लगा लीग को वोट डालने से उनकी जमींदारी बचेगी। लीग के इस नारे से मुस्लिम जनता की मानसिकता में परिवर्तन आता है। उनकी मानसिकता इतनी गिर जाती है कि वे सोच नहीं पाते कि देश के अन्य प्रांत में हिंदू जमींदार भी हैं, उनके साथ उनकी भी जमींदारी खत्म हो जायेगी। हिंदू और काँग्रेस के विरोध में लीग जो साजिश रचता है, उसमें आधा गाँव के मुसलमान फँस जाते हैं। फुन्नन मियाँ जैसे लोग लीग के षड़यंत्र से वाकिफ थे। वे लीग के सांप्रदायिक सोच का पर्दाफाश करते हैं, तो उन्हें मुस्लिम समाज से बहिष्कृत करा दिया जाता है। उनकी लड़की रजिया के निधन पर गाँव के लोग जनाजे में शामिल तक नहीं होते हैं।

काली शेरवानी पहने आये दोनों युवक लीग तथा जिन्ना की राजनीति से मुसलमानों को भ्रमित कर सांप्रदायिक द्वेष फैलाते हैं। प्रारंभ में उनके लिए गंगौली में सांप्रदायिक जहर फैलाना कठिन हो रहा था; क्योंकि गंगौली के निवासी बहुत ही मिलनसार और अपनी जमीन से बेतहाशा प्यार करनेवाले थे तथा देश की राजनीति से अनभिज्ञ थे। इसलिए वे कभी इस्लामिक मुल्क पाकिस्तान के सपने दिखाकर, कभी अंग्रेजों के जाने के बाद हिंदू-प्रधान भारतवर्ष में मुसलमानों का अस्तित्व खतरे में आ जायेगा, अपने अधिकार छीने जायेंगे-- जैसे डर पैदा कर लोगों को सांप्रदायिक बना रहे थे--

> पाकिस्तान बना तो ये आठ करोड़ मुसलमान यहाँ अछूत बनाकर रखे जायँगे।
>
> (रज़ा 2015:239)

वे कहते हैं कि हिंदू-राज आ गया यानी काँग्रेस की सरकार बनी, तो हिंदू मुसलमानों पर अत्याचार करेंगे, मुसलमानों को जबरन हिंदू बनाया जायेगा। पाकिस्तान न बना तो मुसलमानों के लिए जीना दूभर हो जायेगा। अभी समय रहते ही लीग का समर्थन करना चाहिए, बाद में अपनी गलती का एहसास करके कोई फायदा नहीं होगा --

> ठीक है, लेकिन जब हिंदू आपकी माँ-बहन को निकाल ले जायँ तो फ़र्याद न कीजिएगा।
>
> (रज़ा 2015:240)

धर्म-जैसे संवेदनशील विषय को जब राजनीति से जोड़ दिया जाता है तो लोग कट्टर बन जाते हैं, इसके चलते अपने धर्म की हर बात अच्छी लगती है और दूसरे धर्म की सभी बातों से वे नफरत करने लगते हैं। नमाज़, मस्जिद, कुरान आदि के नाम पर मनगढ़त बातों से वे लीगी सदस्य लोगों को गुमराह करते थे --

> इसी नमाज़ के बचाव के लिए तो पाकिस्तान की जरूरत है।
>
> (रज़ा 2015:241)

एक दूसरे प्रसंग में वे कहते हैं -

> हमारी मस्जिद में गायें बांधी जायेंगी।
>
> (रज़ा 2015:240)

फिर-

> क़ुरआन में कहाँ-कहाँ अल्लाह मियाँ ने मुस्लिम लीग को वोट देने का हुक्म दिया है।
>
> (रज़ा 2015:248)

अलग पाकिस्तान की माँग के लिए समर्थन जुटानेवालों के लिए राजनीतिक चरित्र लीग-प्रमुख जिन्ना मुसलमान चरित्र बन जाता है। वे मुस्लिमों के हितों के लिए पाकिस्तान के निर्माण का मुद्दा लेकर घर-घर जाते हैं। लीग को वोट देना हर मुस्लिम का धार्मिक कर्तव्य है। इस्लामिक राष्ट्र की कल्पना तभी संभव है, जब मुसलमान लीग को वोट देंगे। काली शेरवानी पहननेवाला एक युवक कहता है--

> ....और सबसे बड़ी बात तो यह है कि दुनिया के नक्शे पर एक और इसलामी हुकूमत का रंग चढ़ जायेगा। और यह भी नामुमकिन नहीं कि दिल्ली के लाल किले पर एक बार फिर सब्ज इसलामी परचम लहराता नजर आये। अगर पाकिस्तान न बना...
>
> (रज़ा 2015:248)

लीगी समर्थक काँग्रेस और काँग्रेसी नेताओं के प्रति घृणा पैदा करने के लिए लोगों के सामने जिन्ना साहब की भूरि-भूरि प्रंशसा करते हैं। वे कहते हैं कि मुसलमान हुकूमत करने के लिए जन्मे हैं, जिन्ना मुस्लिम की ताकत है, इसलिए उनका साथ देना हर एक मुसलमान का फ़र्ज बनता है। सत्ता-प्राप्ति के लिए अलग पाकिस्तान की माँग करनेवाले जिन्ना को पीर का दर्जा तक देते हैं-

> अल्लाह की रस्सी को महबूती से पकड़िये। आज उस रस्सी का नाम मुहम्मद अली जिन्ना है। आप अल्लाह की ताकत हैं। उठिये और कहिये कि आप पाकिस्तान बनाना चाहते हैं।
>
> (रज़ा 2015:249)

ऐसे तमाम धार्मिक तर्कों से प्रभावित होकर भोले-भाले ज्यादातर ग्रामीण लीग को वोट देना मजहबी फ़र्ज समझ बैठते हैं। हम्माद मियाँ के मन में परिवर्तन होना और कर्बला से आने के बाद दाढ़ी बढ़ाना सांप्रदायिक विषाणु का ही परिणाम है। वह कहता है-

> मैं तो मुसलिम लीग को वोट दूँगा।
>
> (रज़ा 2015:213)

विभाजन-पूर्व भारत में अँग्रेज की नीति कायम थी। अँग्रेज अपनी कूटनीति से कभी मुस्लिमों को अपने करीब लेकर फुसला रहे थे तो कभी हिंदुओं को। हिंदू जनता भी इस चाल को समझ नहीं पायी। हिंदुओं के पुनरुत्थानवादी संगठन, हिंदू पण्डित और पढ़े-लिखे युवक सांप्रदायिक जहर फैला रहे थे। हिंदू संगठन हमेशा अपना अतीत गौरव, वीरता आदि समूह पर थोपकर लोगों को मुस्लिमों के

खिलाफ भड़का रहे थे। उपन्यास का हिंदू पात्र मास्टर साहब छिकुरिया से बहस करते समय इमाम नाम सुनकर बौखला जाता है और कहता है-

> इन मलिच्छों ने तो भारतवर्ष तहस-नहस कर दिया है। मंदिरों को तोड़-ताड़कर मस्जिदें बनवा ली हैं इन पापियों ने।
>
> (रज़ा 2015:173)

मास्टर साहब की यह बात छिकुरिया नहीं मानता, क्योंकि उसने वर्षों से गाँव का मंदिर वहीं देखा, जहाँ पहले था। हिंदू सदियों से अपनी पीढ़ी दर पीढ़ी यह बताते आ रहे हैं कि मुस्लिम शासकों ने मंदिरों को तोड़कर वहाँ मस्जिदें बनवाई हैं, हिंदुओं पर अत्याचार किया है। इसके कारण हिंदुओं की पीढ़ियाँ सदियों से मुस्लिमों से नफरत करती आ रही हैं। मास्टर साहब समाज को नैतिकता, भाईचारा और अमन के पाठ पढ़ाने के बजाय नफरत के पाठ पढ़ाने में लगे हुए थे। हिंदू पीढ़ियों से वही बातें सुनते आ रहे हैं, लेकिन वे भूल गये कि हमारी नस्ल एक ही है। मास्टर साहब भूल गये थे कि जाकिये ने मंदिर के लिए पाँच एकड़ जमीन दी थी। धर्म के संस्थापक स्वामीजी नैतिकता का पाठ पढ़ाने के बजाय सांप्रदायिक जहर फैलाना अपना कर्तव्य मानते हैं। वे हिंदुओं को ललकारते हैं-

> ....तब भगवान कृष्ण ने कहा, हे अर्जुन ! हूँ तो मैं हूँ और मेरे सिवाय कोई और नहीं है। आज वह मुरली मनोहर भारत के हर हिंदू को पुकार रहा है कि उठो और गंगा और यमुना के पवित्र तट से इन मलेच्छ मुसलमानों को हटा दो....
>
> (रज़ा 2015:275)

स्वामीजी के उपस्थित लोगों के प्रति सम्बोधन से प्रभावित होकर हिंदू बौखला जाते हैं। इसका बराबर फायदा उठाते हुए स्वामीजी आगे कहते हैं-

> ...धर्म संकट में है। गंगाजली उठाकर प्रतिज्ञा करो कि भारत की पवित्र भूमि को मुसलमानों के खून से धोना है....देखो, कलकत्ता और लाहौर और नवाखाली में इन मल्लेच्छ तुर्कों ने हमारी माताओं का कैसा अपमान किया है... (रज़ा 2015:274)

इस प्रकार धर्म का संदेश देनेवाले महंत लोग मनुष्यता की सीख देने के बजाय सांप्रदायिक बातों से लोगों को भड़काते हैं। सदियों से मुसलमानों के साथ रह रहे हिंदू सोचने लगते हैं कि मुसलमान आखिर

मुसलमान हैं, वे भरोसे के पात्र नहीं बन सकते। भीड़ को उत्तेजित कर स्वामीजी दूसरे गाँव की तरफ चले जाते हैं। इधर उत्तेजित भीड़ 'जय बजरंग बली की जय !' नारा लगाते हुए बारिखपुर के मुसलमानों के घर जलाने के लिए अग्रसर होते हैं। धीरे-धीरे हिंदू- मुसलमानों में तनाव बढ़ता है।

अलीगढ़ से आये युवक, मुस्लिम लीग और कट्टर हिंदुत्व की सोच रखनेवाले आर.एस.एस., हिंदू महासभा, बजरंग दल जैसे संगठनों के ऐसे प्रचारों तथा कर्मों से सांप्रदायिक दंगों की बाढ़-सी आ जाती है। ऐसा सांप्रदायिक सोच देश-विभाजन का जिम्मेदार कारक रहा। सांप्रदायिक शक्ति देश-विभाजन के बाद भी थमती हुई नजर नहीं आती। फुन्नन मियाँ का लड़का मुन्ताज 'भारत छोड़ो' आंदोलन में शहीद हुआ था। शहर में आयोजित जलसे में मुसलमान होने के कारण नेता मुन्ताज का नाम नहीं लेता, जिससे फुन्नन मियाँ अंदर से टूट जाता है। देश के नाम पर हुई कुर्बानियाँ भी धर्म के आधार पर गिनी जाने लगी थीं।

**निष्कर्ष :**

राजनीतिक योजना के तहत हिंदू नेताओं द्वारा हिंदुओं में और मुसलमान नेताओं द्वारा मुसलमानों के मन में अज्ञात डर फैलाकर लोगों के मन में नफरत फैलायी गयी थी। सांप्रदायिकता को बढ़ावा देने में अनपढ़ ग्रामीण लोगों की तुलना में शिक्षित शहरी वर्ग ज्यादा जिम्मेदार रहा। हिंदू और इस्लाम धर्मों के कुछ विश्वास तथा आदर्श भी जिम्मेदार रहे -- जो अपने धर्म को श्रेष्ठ मानते तथा दूसरे धर्म से नफरत करने के लिए उकसाते हैं। 'आधा गाँव' उपन्यास में उपन्यासकार सांप्रदायिकता जैसे संकीर्ण सोच के विरुद्ध आगाह करते हैं कि -- देश के बँटवारे से नहीं, अपितु मानसिकता के परिवर्तन से ही सांप्रदायिकता-जैसी बीमारी और विकट समस्या को दूर किया जा सकता है। आजादी से पहले की स्थिति को देखकर बहुत लोगों ने सोचा था कि भारत-पाकिस्तान के रूप में अलग-अलग मुल्क बन जाने के बाद सांप्रदायिकता की जड़ें खत्म हो जायेंगी। लेकिन पाकिस्तान बन जाने के बाद भी सांप्रदायिकता की समस्या का कोई समाधान नहीं हो पाया बल्कि, यह समस्या पीढ़ी दर पीढ़ी तक बढ़ती गई। आज भी चुनाव के मैदान में इस दर्द को घसीटा जाता है ताकि लोगों को बाँटा जा सके।

**ग्रंथ-सूची :**

जायसवाल, शैलजा.राही मासूम रज़ा के उपन्यासों में समकालीन संदर्भ. कानपुर: चन्द्रलोक प्रकाशन, 2009.

ज्ञानी, शिवदत्त. भारतीय संस्कृति. मुंबई: भारतीय भवन, 1944.

पाठक, रामचन्द्र, संपा. आदर्श हिंदी शब्दकोश. पुनर्मुद्रण. वाराणसी: भार्गव बुक डिपो, 2009.

बाबूराम. हिंदी निबंध साहित्य का सांस्कृतिक अध्ययन. प्रथम संस्करण. नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन, 2002.

रज़ा, राही मासूम. आधा गाँव. चौदहवीं आवृति. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 2015.

वसु, धीरेन्द्र नाथ वर्मा, नगेन्द्र, संपा. हिंदी विश्वकोश. वाराणसी: नागरी प्रचारिणी सभा, 1986.

Prasad, B. A BACKGROUND TO THE STUDY OF ENGLISH LITERATURE. New Delhi: Macmillan publishers India Limited, 2009.

**संपर्क-सूत्र:**
सहायक शिक्षक
दक्षिण चिनाकोना उच्च माध्यमिक विद्यालय
ओदालगुरि